Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 20, Issue No. 4, October-2023, ISSN 2230-7540

भारतीय समाज में दलितों का उत्थान: एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण

डॉ. विपिन कुमार[1]*, डॉ. सत्येन्द्र सिंह[2]

[1] समाजशास्त्र विभाग, कॉलिज ऑफ एजूकेशन, बिलासपुर (गौतमबुद्धनगर)

ई-मेल vipinchauhan0097@gmail.com

[2] एसोसिएट प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग, जनता वैदिक कॉलिज, बड़ौत (बागपत)

ई-मेल satyendra.jvc@gmail.com

***सारांश** - प्रत्येक व्यक्ति जानता है कि मानव समाज आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और क्षेत्रीय आधार पर विभिन्न श्रेणियों में विभाजित हो गया है। यह तो नहीं मालूम कि मानव समाज का विघटन कब, कैसे और क्यों हुआ, लेकिन यह निश्चित है कि इस प्रकार का विभाजन उस मानव प्रजाति के नाम पर कलंक है जो पृथ्वी पर जीवधारियों में सबसे अधिक विकसित और बुद्धिमान है, साथ ही यह विभाजन अवांछनीय, दुर्भाग्यपूर्ण और गलत भी है। यह वास्तव में दुःखद है कि एक ही प्रजाति का एक सदस्य दूसरे सदस्य को केवल इसलिए छूने को तैयार नहीं है क्योंकि उसका जन्म दूसरे कुल में हुआ है।*

कई समाज-सुधारकों ने अछूतोद्धार के लिये प्रयास किये हैं और उनमें कुछ सफल भी हुए हैं, लेकिन इस सफलता को संतोषजनक नहीं कहा जा सकता। सरकार दिन-प्रतिदिन इसके लिये नये-नये नियम बना रही है लेकिन अभी तक स्थिति में कोई विशेष सुधार नहीं आ पाया है। दलित वर्ग की वास्तविक और स्थायी जागरूकता के लिए उनकी संस्कृति, सामाजिक विचारधारा और स्वयं के प्रति विकासशीलता की भावना का उदय होना परमावश्यक है।

कीवर्ड - भारतीय समाज, दलित, उत्थान, समाजशास्त्रीय

----------X----------

प्रस्तावना

भारतीय समाज में कमजोर वर्ग के लोगों का धार्मिक, शारीरिक और आर्थिक शोषण होने के साथ-साथ उसका पूरे देश में सामाजिक रूप से भी शोषण किया गया। यह सामाजिक शोषण और भी अधिक कष्टप्रद था क्योंकि इससे मनुष्य को मानसिक वेदना भी सहनी पड़ती थी। इस प्रकार के व्यवहार के लिए सभी वर्गों के लोग उत्तरदायी थे। निम्न वर्ग भी सैकड़ों उपनिम्न वर्गों में विभाजित हो गया जिसको क्रमानुसार रखने पर एक उपवर्ग दूसरे उपवर्ग से उच्च या निम्न स्तर पर अंकित कर दिया जाता था। इस प्रकार का सामाजिक दुराचार सम्पूर्ण भारत में विद्यमान हो गया।

सामान्यतः आर्थिक और शारीरिक रूप से सुदृढ़ वर्ग के लोग ही कमजोर वर्ग के लोगों पर आधिपत्य जमाये रहते थे। पंडितों और क्षत्रियों पर इस प्रकार के प्रभुत्व का कोई प्रभाव नहीं पड़ता था, भले ही वे आर्थिक रूप से सम्पन्न भी न हो; लेकिन अन्य सभी वर्गों के सदस्यों को इन सामाजिक रीति-रिवाज़ों द्वारा कहीं न कहीं अपमानित होना पड़ जाता था। पंडितों ने स्वयं को उच्चतम वर्ग का सदस्य घोषित कर दिया और स्वयं को इतना श्रेष्ठ समझने लगे कि वे पंडितों के बनाये भोजन के अलावा किसी अन्य का पकाया भोजन भी ग्रहण नहीं करते थे।

ऋग्वेद में शूद्रों का वर्णन कहीं भी नहीं है, केवल पुरुषसूक्त को छोड़कर जिसे बाद की उत्पत्ति माना जाता है। इस सूक्त में यह कहा गया है कि चारों श्रेणियाँ महान उत्सर्जित पुरूष से उत्पन्न हुई। ''ब्राह्मण उसका मुख था,

www.ignited.in

राजन्य का निर्माण उसकी दो भुजाओं से हुआ, उसकी जंघा वैश्य बनी, उसके पैरों से शूद्र की उत्पत्ति हुई।''

सामाजिक पिछड़ापन-

बच्चों को बचपन से ही श्रेणी विभाजन की शिक्षा दे दी जाती थी और एक पाँच साल का बच्चा भी सामान्यतः इस बात के प्रति पूर्ण सचेत रहता था कि उसका समाज में कौन सा स्थान है? एक पंडित का पुत्र अपना जन्मजात अधिकार समझता था कि हर आदमी उसके चरण स्पर्श करे, जबकि एक शूद्र के बालक को इस बात का पूरा-पूरा आभास होता था कि उसे किसी क्षत्रिय बालक के समकक्ष नहीं बैठना चाहिए। ये भावनाएं, अपनी जड़े इतनी गहरी करती गयीं कि हर मनुष्य इसे संस्कृति का प्रतीक मानने लगा। इस प्रमाणिक विचार एवं व्यवहार से विमुख होने का किसी में साहस न था। यह भावना कि ''मैं पिछड़ी जाति का हूँ और मुझे गुलाम की तरह ही व्यवहार करना चाहिए, विशेषकर उन सभी लोगों के साथ जो मुझसे उच्च कुलीन हैं क्योंकि उनका जन्म ऐसे घराने में हुआ है जहाँ के लोगों की सेवा करना ही मेरा धर्म है।'' ही वास्तविकता में सच्चा सामाजिक पिछड़ापन है। आत्मविश्वास की कमी और हीन भावना से ही उनके प्रयासों में शिथिलता और विमुखता आती चली गयी, जिसके कारण वे लोग अपने बढ़ने और प्रगति करने का कोई अवसर न पा सकें।

अस्पृश्यता का अभिशाप-

छुआछूत का प्रचलन कैसे और कब प्रारम्भ हुआ यह तो ज्ञात नहीं है, लेकिन यह सत्य है कि यह प्रथा हिन्दू समाज के विघटन का एक प्रमुख कारण है। वैदिक धर्म में इस प्रकार की प्रथा को कोई मान्यता नहीं दी गयी है। मानव विज्ञान के प्रारम्भिक विकास काल में ऐसी भावना के लिये कोई स्थान ही न था। यह भी मालूम नहीं हो पाया कि समाज के एक समुदाय को मल-मूत्र साफ करने के लिए क्यों बाध्य किया गया, क्योंकि प्राचीन भारतीय साहित्य में इस जाति का कोई उल्लेख नहीं मिलता। कुछ लोग इस दृष्टि से दुर्भाग्यशाली कहे जा सकते हैं कि उनके पास जीविकोपार्जन के लिये झाड़ू लगाने और दूसरों का मल-मूत्र उठाने के अलावा अन्य कोई काम न था। ये लोग ऐसे काम करके समाज में सफाई और स्वच्छता को बढ़ावा देते हैं ''जो व्यक्ति दूसरों को पवित्र और शुद्ध करता है वह वास्तव में महान है उसका हर किसी को सम्मान करना चाहिए।''

आधुनिक भारतीय समाज की कई श्रेणियां हैं। उनमें से यदि कोई दूसरे व्यक्ति से एक पग भी आगे है तो वह उस पर अपना प्रभुत्व जमाकर अपने से निम्न वर्ग को उत्पीड़ित करता रहता है। समृद्ध और सम्पन्न लोग अपने वैभव को अपने भाग्य का और अपने पूर्व जन्म के अच्छे कर्मों का परिणाम बताने की चेष्टा करते हैं ''समाज के उच्च वर्ग को यह जान लेना चाहिए कि उनको वास्तविक आनन्द तभी मिल सकता है जब प्रत्येक दलित के मुख पर मुस्कान हो तथा उसका पेट भरा हो।''

आरक्षण का संबल-

आरक्षण की माँग करना ऐसा लाभप्रद मालूम होता है, जैसे कि किसी को कुबेर का खजाना हाथ लगने की आशा हो। वे इस बात को जानने का प्रयत्न नहीं करते कि इस आरक्षण के दीर्घकालिक प्रभाव और उस समुदाय के भविष्य पर होने वाला कुप्रभाव कितना भयंकर होगा। किसी भी वर्ग की भलाई के लिए आत्म-निर्भरता और स्वयं व्यवसाय ही एक मात्र साधन है। ''परिश्रम का कोई विकल्प नहीं है लेकिन दुर्भाग्यवश आरक्षण के लॉलीपॉप ने श्रम के महत्व को कम कर दिया है'' क्योंकि अब चीजें आसान नजर आने लगी हैं।

आर्थिक रूप से कमजोर लोगों को बैसाखियों का सहारा देने में कोई बुराई नहीं है। इसकी सुविधा दलितों, सामाजिक रूप से अलग कर दिये लोगों और आत्म-सम्मानहीन लोगों को भी मिलनी चाहिए, किन्तु सभी इस बात के लिये उत्साहित करना चाहिए कि वे जल्दी से जल्दी अपने पैरों पर खड़े हो सकें। आरक्षण का लाभ उन लोगों को मिलना चाहिए जिनके पास रहने को उचित घर नहीं खाने को भरपेट भोजन नहीं, शिक्षा प्राप्त करने की सुविधा नहीं और जो श्रम जीवी हैं।

तथाकथित दलित वर्ग के अधिकतर लोगों में काम करने की क्षमता होती है प्रगति पथ पर अग्रसर होने की आशंका होती है और वे बहुत कुछ कर सकते हैं, किन्तु उनके पास अपने बुद्धि कौशल्य को दिखाने और अपनी योग्यता का प्रदर्शन करने के लिए सही वातावरण और आधारभूत ढाँचा नहीं होता। इसलिए इस वर्ग के अधिकतर लोग उस स्थान से ऊपर उठने में समर्थ नहीं हो पाते, जहाँ से उन्होंने अपने जीवन का शुभारम्भ किया था। कई परिवार कई पीढ़ियों से दलितों का जीवन ही गुजारते आ रहे हैं। उनका उद्धार तभी सम्भव है जब एकाधिकार समुदाय के लोग उनकी यथासम्भव सहायता करें।

''खुश रहने का यही समय, परिणाम यहीं मिल जाएगा।

सुख बाँटोगे सुख पाओगे, स्वर्ग यहीं बन जाएगा।''

संकल्प एवं आत्मविश्वास-

दलितों की स्थिति में सुधार लाना आवश्यक है क्योंकि उन्हें भी समाज के अन्य वर्ग के व्यक्तियों के समकक्ष आने का अवसर मिलना ही चाहिए। लेकिन सर्वप्रमुख आवश्यकता इस बात की है कि दलित अपने उद्धार के लिए स्वयं भी प्रयास करें। अपने को असहाय समझकर सब कुछ नियति पर छोड़ देने वाली विचारधारा को बदलना होगा। पिछले जन्म के पापों की सजा भुगतने के लिए किसी का पुर्नजन्म नहीं होता।

दलितों के समझदार व्यक्तियों को प्रण करना चाहिये कि वे कभी भी शराब, सिगरेट, बीड़ी आदि को हाथ न लगाएँगे। किसी भी परिस्थिति में जुआ नहीं खेलेंगे। इन लोगों में आयु के कारण परिपक्वता आ जाती है जिस कारण युवा वर्ग उनके उपदेशों को सुनता भी है और उन पर ध्यान भी देता है।

निष्कर्ष

दलितों की दुर्दशा पर प्रत्येक मानव का मन करूणा से भर उठता है और कुछ लोगों में दुःखद और की आँखों में तो उनकी वेदना देखकर अश्रु तक छलकने लगते हैं। यह वास्तव कष्टपूर्ण है कि हमारे समाज का एक वर्ग वास्तव में दयनीय जीवन जीने को बाध्य है, क्योंकि उसे प्राप्त सुविधायें, न के बराबर हैं। दलित वर्ग के उत्थान के लिए उनके जीवन में अनेकों प्रकार के बदलाव लाने होंगे। उनके आर्थिक स्तर को समाज के दूसरे सदस्यों के समरूप लाना होगा, उनमें विकास, सांस्कृतिक, मेलजोल और पारस्परिक मैत्री भाव जगाना होगा, जिससे उनमें आत्म-सम्मान और आत्म-विश्वास की भावना जन्म ले सके और उनका वास्तविक विकास हो।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

सिंह, वी०के० (2010)- ''सोशल प्रॉब्लम्स ऑफ अनटचेबल कॉस्टस'', नई दिल्ली, डी०पी०एस० पब्लिशिंग हाऊस, पृ०सं० 17।

शिवप्रकाशम्, डॉ० एम०एन० (2002)- ''दलितस एण्ड सोशल मोबिलाइजेशन", नई दिल्ली, रजत पब्लिकेशन हाऊस, पृ०सं० 9।

पासवान, सदानन्द (2011)- ''दलितस एण्ड प्रैक्टिस ऑफ अनटचेबिलिटी", नई दिल्ली, कनिक पब्लिकेशन, पृ०सं० 114।

श्यामलाल (2006)- ''अनटचेबल कास्टस इन इण्डिया'', नई दिल्ली, रावत पब्लिकेशन हाऊस, पृ०सं० 36।

श्रीवास्तव, डॉ० एस०एस०एल० (2001)- ''दलित उत्थान'', मेरठ, सिग्मा कम्प्यूटर्स, पृ०सं० 14।

मिश्रा, प्रो० नारायण (2004)- ''दलितस इन इण्डिया'', दिल्ली, दीप एण्ड दीप पब्लिकेशन हाऊस, पृ०सं० 74।

सिन्हा, राकेश के० (2010)- ''गाँधी, अम्बेडकर एण्ड दलित'', जयपुर, पृ०सं० 37।

वेबस्टर, जॉन सी०बी० (1999)- ''हू इज ए दलित?'' माइकल, एस०एम०, दलितस इन मॉर्डन इण्डिया विज़िन एण्ड वैल्यूज़, नई दिल्ली, विस्तार, पृष्ठ 68-82।

शाह, घनश्याम (2001)- ''दलितस आइडेन्टिटी एण्ड पॉलिटिक्स'', नई दिल्ली, शेग, पृ०सं० 103।

बेहर, एस०सी० (2002)- ''रिजर्वेशन: एन इनसूफीसाइन्ट कण्डीशन फॉर सोशल ट्रान्सफोरमेशन'', नई दिल्ली, कनसेप्ट, पृ०सं० 80-82।

Corresponding Author

डॉ. विपिन कुमार*

समाजशास्त्र विभाग, कॉलिज ऑफ एजूकेशन, बिलासपुर (गौतमबुद्धनगर)

www.ignited.in